IJAER/November-December 2017/Volume-6/Issue-3 ISSN: 2278-9677
International Journal of Arts & Education Research

जैन संस्कृति की मूल अवधारणा

डॉ. देवीशंकर शर्मा
व्याख्याता जैनोलॉजी
एसबीडी राजकीय महाविद्यालय सरदारशहर

सार

विश्व के धर्म, दर्शन, संस्कृति, देश, समाज अथवा जाति के प्राचीन से प्राचीनतम अतीत के परोक्ष स्वरूप को प्रत्यक्ष की भाँति देखने का दर्पण तुल्य एकमात्र वैज्ञानिक साधन इतिहास है। किसी भी देश, समाज, जाति, धर्म, दर्शन तथा संस्कृति के अभ्युदय, पतन, पुनरुत्थान, आध्यात्मिक उत्कर्ष एवं अपकर्ष में निमित्त बनने वाले लोक नायकों के जीवनवृत्त आदि के क्रमबद्ध संकलन, आलेखन का नाम ही इतिहास है। इतिहास मानवता के लिए, भावी पीढ़ियों के लिए दिव्य प्रकाश स्तम्भ के समान दिशाबोधक मार्गदर्शक माना गया है, अतः किसी भी धर्म, समाज, संस्कृति अथवा जाति की सर्वतोमुखी उन्नति के लिए प्रेरणा के प्रमुख स्रोत उसके सर्वांगीण शृंखलाबद्ध इतिहास का होना अनिवार्य रूप से परमावश्यक है।

परिचयरू

जैन धर्म, दर्शन एवं संस्कृति की प्राचीनता

धर्म और दर्शन मनुष्य जीवन के दो अभिन्न अंग हैं। जब मानव चिन्तन के सागर में गहराई से डुबकी लगाता है, तब दर्शन का जन्म होता है तथा जब वह उस चिन्तन का जीवन में प्रयोग करता है, तब धर्म की अवतारणा होती है। मानव मन की उलझन को सुलझाने के लिए ही धर्म और दर्शन अनिवार्य साधन हैं। धर्म और दर्शन परस्पर सापेक्ष हैं, एक दूसरे के पूरक हैं। दोनों का विषय सम्पूर्ण विश्व है। दर्शन मानव की अनुभूतियों की तर्कपूर्ण व्याख्या करके सम्पूर्ण विश्व के आधारभूत सिद्धान्तों की अन्वेषणा करता है। धर्म आध्यात्मिक मूल्यों के द्वारा सम्पूर्ण विश्व का विवेचन करने का प्रयास करता है। दोनों ही मानवीय ज्ञान की योग्यता में, यथार्थता में तथा चरम तत्त्व में विश्वास करते हैं। दर्शन सिद्धान्त को प्रधानता देता है, तो धर्म व्यवहार को दर्शन बौद्धिक आभास है, धर्म आध्यात्मिक विकास है। मानव जीवन को सुन्दर, सरस एवं मधुर बनाने के लिए दोनों ही तत्त्वों की जीवन में अत्यन्त आवश्यकता है।

विश्व के धर्म, दर्शन, संस्कृति, देश, समाज अथवा जाति के प्राचीन से प्राचीनतम अतीत के परोक्ष स्वरूप को प्रत्यक्ष की भाँति देखने का दर्पण तुल्य एकमात्र वैज्ञानिक साधन इतिहास है। किसी भी देश, समाज, जाति, धर्म, दर्शन तथा संस्कृति के अभ्युदय, पतन, पुनरुत्थान, आध्यात्मिक उत्कर्ष एवं अपकर्ष में निमित्त बनने वाले लोक नायकों के जीवनवृत्त आदि के क्रमबद्ध संकलन, आलेखन का नाम ही इतिहास है। इतिहास मानवता के लिए, भावी पीढ़ियों के लिए दिव्य प्रकाश स्तम्भ के समान दिशाबोधक मार्गदर्शक माना गया है, अतः किसी भी धर्म, समाज, संस्कृति अथवा जाति की सर्वतोमुखी उन्नति के लिए प्रेरणा के प्रमुख स्रोत उसके सर्वांगीण शृंखलाबद्ध इतिहास का होना अनिवार्य रूप से परमावश्यक है।

जैन धर्म की राष्ट्रीय भूमिका–

इस शासन साहित्य परिषद् की ओर से जब मुझे इन व्याख्यानों के लिये आमंत्रण मिला और तत्संबंधी विषय के चुनाव का भार भी मुझही पर डाला गया तब मैं कुछ असमंजस में पडा. आपको विदित ही होगा कि अभी कुछ वर्ष पूर्व बिहार राज्य शासन की ओर से एक विद्यापीठ स्थापना की गई है जिसका उद्देश्य है प्राकृत जैन तत्त्वज्ञान तथा अहिंसा विषयक स्नातकोत्तर अध्ययन व अनुसंधान । इस विद्यापीठ के संचालक का पद मुझे प्रदान किया गया है। इस बात पर मुझ से

अनेक ओर से प्रश्न किया गया है कि बिहार सरकार ने यह कार्य क्यों और कैसे किया ? उनके इस प्रश्न की पृष्ठभूमि यह है कि स्वतंत्र भारत की राष्ट्रीय नीति सर्वथा धर्म निरपेक्ष निश्चित हो चुकी है, और तद्नुसार संविधान में सब प्रकार के धार्मिक, साम्प्रदायिक, जातीय आदि पक्षपातों का निषेध किया गया है. अतएव इस पुष्ठभूमि पर उक्त प्रश्न का उठना स्वाभाविक ही है. इस प्रश्न का सरल उत्तर मेरी ओर से यही दिया जाता है कि बिहार सरकार के केवल इस जैन विद्यापीठ की ही स्थापना नहीं की है, किंतु उसके द्वारा संस्कृत व वैदिक संस्कृति के अध्ययन व अनुसंधान के लिये मिथिला विद्यापीठ, पालि व बौद्ध तत्त्वज्ञान के लिये नव नालंदा महाबिहार की भी स्थापना की गई है । इस प्रकार का एक संस्थान पटना में अरबी फारसी भाषा साहित्य व संस्कृति के लिये भी स्थापित किया गया है। भारत की प्राचीन संस्कृतियों के उच्च अध्ययन, अध्यापन व अनुसंधान हेतु इन चार विद्यापीठों की स्थापना द्वारा शासन ने अपना धर्म–निरपेक्ष दृष्टिकोण स्पष्ट कर दिया है.

धर्मनिरपेक्षता का यह अर्थ कदापि नहीं है कि शासन द्वारा किसी भी धर्म, तत्त्वज्ञान व तत्संबंधी साहित्य के अध्ययन आदि का निषेध किया जाय, किंतु उसका उद्देश्य मात्र इतना ही है कि कीसी धर्म – विषशे के लिये सब सुविधायें देना और दूसरे धर्मो की उपेक्षा करना, ऐसी राष्ट्र नीति कदापि नहीं होना चाहिये । इसके विपरीत शासन का कर्तव्य होगा कि वह देश के प्राचीन इतिहास साहित्य, सिद्धान्त व दर्शन आदि संबंधी सभी विषयों के अध्ययन व अनुसंधान के लिये जितनी हो सके उतनी सुविधायें समान दृष्टि से, निष्पक्षता के साथ, उपस्थित करे। इस उदात्त व श्रेयस्कर दृष्टिकोण से कभी किसी को कोई विरोध नहीं हो सकता। मैं समझता हूँ इसी धर्म निरपेक्ष दृष्टिकोण से प्रेरित होकर इस शासन परिषद् ने मुझे इन व्याख्यानों के लिये आमंत्रित किया है, और उसी दृष्टि से मूझे जैनधर्म का भारतीय संस्कृति को योगदान विषयक यहाँ विवेचन करने में कोई संकोच नही । ध्यान मुजे केवल यह रखना है कि इस विषय की यहाँ जो समीक्षा की जाय, उसमें आत्म प्रशंसा व परनिंदा की भावना न हो, किंतु प्रयत्न यह रहे कि प्रस्तुत संस्कृति की धारा ने भारतीय जीवन व विचार एवं व्यवस्थाओं को कब कैसा पुष्ट और परिष्कृत किया, इसका यथार्थ मूल्यांकन होकर उसकी वास्तविक रूपरेखा उपस्थित हो जाय ।

उदार नीति का सैद्धान्तिक आधार

नारायण के शत्रुओं की भी उन्होंने प्रतिनारायण का उच्चपद प्रदान किया है. रावण को दशमुखी राक्षस न मान कर उसे विद्याधर वंशी माना है, जिसके स्वाभाविक एक मुख के अतिरिक्त गले के हार के नौ मणियों में मुख का प्रतिबिम्ब पड़ने से लोग उसे दशानन भी कहते थे। अग्निपरीक्षा हो जाने पर भी जिस सीता के सतीत्व के संबंध में लोग निरूशंक नहीं हो सके, उस प्रसंग को जैन रामायण में बडी चतुराई से निबाहा गया है। सीता किसीप्रकार भी रावण से प्रेम करने के लिये राजी नहीं है इस कारण रावण के दुख को दूर करने के लिये उसे यह सलाह दी जाती है कि वह सीता के साथ बलात्कार करे। किंतु रावण इसके लिये कदापी तैयार नहीं होता। वह कहता है कि मैंने व्रत लिया है कि किसी स्त्री को राजी किये बिना मैं कभी उसे अपने भोग का साधन नहीं बनाऊंगा। इस प्रकार जैन पुराणों में रावण को राक्षसी वृत्ति से ऊपर उठाया गया है, और साथ ही सीता के अक्षुण्ण सतीत्व का ऐसा प्रमाण उपस्थित कर दिया गया है, जो शंका से परे और अकाट्य हो । इन पुराणों में हनुमान, सुग्रीव आदि को बंदर नहीं, किंतु विद्याधर वंशी राजा माना गया है, जिनका ध्वज चिह्न वानर था। इस प्रकार जैनपुराणों में जो कथाओं का वेशिष्ट्य पाया जाता है, वह निरर्थक अथवा धार्मिक पक्षपात की संकुचित भावना से प्रेरित नहीं है। उसका एक महान् प्रयोजन यह है कि उसके द्वारा लोक में औचित्य की हानि न हो, और साथ ही आर्य अनार्य किसी भी वर्ग की जनता को उससे किसी प्रकार की ठेस न पहुँचकर उनकी भावनाओं की भले प्रकार रक्षा हो।

उद्देश्य

1ण जैन संस्कृति की मूल अवधारणा का अध्ययन
2ण जैन धर्म की राष्ट्रीय भूमिका का अध्ययन

जैन संस्कृति का इतिहास एवं दर्शन

जैन दर्शन विश्व का सबसे प्राचीन धर्म दर्शन है। यह कहना सहजे तो नहीं है, चूंकि जैन दर्शन की प्राचीनता की प्रामाणिकता के लिए कोई क्रमबद्ध साहित्य अथवा इतिहास सुव्यवस्थित रूप से विद्यमान नहीं है। यद्यपि पिछले पचास वर्षों में अनेक विद्वानों ने इस दुष्कर कार्य को करने का अमित प्रयास किया है। तथापि क्रमबद्ध इतिहास के अभाव में अनेक विचारकों ने जैन दर्शन के अस्तित्व के बारे में अनेक भ्रमपूर्ण विचारों का प्रतिपादन किया है। किसी ने जैन दर्शन को हिन्दू धर्म की शाखा मान लिया, तो किसी ने इसे बौद्ध दर्शन की शाखा कह दिया। महावीर तथा बुद्ध की समकालीनता से जैन दर्शन को अर्वाचीन मान लिया गया। जैसा कि श्री विल्सन कहते हैं, कि ष्सब विश्वस्त प्रमाणों से भी यह अनुमान दूर नहीं किया जा सकता है, कि जैन जाति एक नवीन संस्था हैं और ऐसा लगता है कि वह सर्व प्रथम आठवीं और नवीं सदी ईसवी में वैभव और सत्ता में आई थी। इससे पूर्व बौद्ध धर्म की शाखा के रूप में वह कदाचित अस्तित्व में रही हो और इस जाति की उन्नति उस धर्म के दब जाने के बाद से ही होने लगी हो कि जिसको स्वरूप देने में इसका भी हाथ था।

इस प्रकार के भ्रमपूर्ण विपरीत विचारों एवं धारणाओं को निरर्थक सिद्ध करते हुए विविध साहित्यिक, ऐतिहासिक, पुरातात्विक एवं वैज्ञानिक साक्ष्यों के द्वारा जैन दर्शन की प्राचीनता को प्रमाणित करके इसके गरिमामय इतिहास के द्वारा इसके प्राचीन गौरव को पुनः स्थापित करने की अत्यधिक आवश्यकता है। फलस्वरूप एक समृद्ध धर्म–दर्शन के पुनरुत्थान के द्वारा मानव संस्कृति का ऊर्ध्वगामी विकास किया जा सके। सर्वप्रथम विविध साहित्यिक प्रमाणों से ही जैन दर्शन की प्राचीनता को प्रमाणित करेंगे।

जैन धर्म का भारतीय संस्कृति में योगदान

1. दर्शन के क्षेत्र में देन

जैन धर्म ने भारतीय दर्शन के क्षेत्र में अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। जैन धर्म में अनेक नए सिद्धांतों का प्रतिपादन किया जो मौलिक थे। उदाहरण के लिए जैन धर्म के स्यादवाद को लिया जा सकता है। स्यादवाद का अर्थ सभी दृष्टिकोण से देखने पर सत्य के रूप देखे जा सकते हैं। इनमें हर विचार सत्य ही व्यक्त करता है। स्यादवाद के अतिरिक्त अनेक मौलिक सिद्धांतों को जैन धर्म में भारतीय संस्कृति को प्रदान किया। इसके विषय में अनेकांतवाद का सिद्धांत बहुचर्चित है।

2. सामाजिक देन

जैन धर्म की सामाजिक क्षेत्र में भी महत्वपूर्ण देन है। जैन धर्म को आश्रय देने वाले राजाओं ने समाज के निर्धन वर्ग के लिए अनेक औषधि घर और विश्रामालय और पाठशालाओं का निर्माण कराया। जहां निशुल्क दवाइयां ठहरने की सुविधा और शिक्षा की व्यवस्था उपलब्ध कराई। इससे समाज के अन्य वर्गों में भी निर्धनता के प्रति दया भाव व दान देने की भावना जागृत हुई। इसके अलावा जैन धर्म में स्त्रियों की स्थिति सुधारने के लिए भी प्रयास किया। इस उद्देश्य से उन्हें जैन संघ में रहने वाले जैन शिक्षाओं का पालन कर मोक्ष प्राप्त करने का भी अधिकार जैन धर्म के द्वारा ही किया गया था।

महावीर के समय में जाति प्रथा प्रचलित थी और समाज में ऊंच–नीच हुआ छुआछूत की भावनाएं थी। इस कारण निम्न वर्ग की स्थिति सोचनीय थी। जैन धर्म ने ना केवल जाति प्रथा का विरोध किया बल्कि सभी व्यक्तियों को एक समान बताया। जैन धर्म के द्वारा जाति प्रथा का विरोध करने के कारण ब्राह्मणों की शक्ति कम होने लगी व सामाजिक समानता की भावना अच्छी होने लगी। जिससे शूद्रों (निम्न वर्ग) की स्थिति में सुधार हुआ। जैन ग्रंथ में वर्णन है कि मालिकों को अपने दास, दासियों, कर्मचारियों का अच्छी तरह से सेवा करना चाहिए। इस प्रकार की शिक्षा से समाज में निम्न वर्ग और दासों के प्रति उदारता एवं सहृदयता के भाव जागृत हुए जिसका सीधा प्रभाव उनकी सामाजिक स्थिति पर पड़ा।

3. धार्मिक देन

जैन धर्म ने ब्राह्मण धर्म की बुराइयों की आलोचना भी की। अतः ब्राह्मणों को भी उनके धर्म में उपस्थित बुराइयों व कुरीतियों का ज्ञान हुआ। ब्राह्मणों को अपने धर्म को बनाए रखने के लिए यह जरूरी हो गया कि वह अपने धर्मों में सुधार कर लें। अतः जैन धर्म के कारण ब्राह्मण धर्म पहले की अपेक्षा अधिक सरल हो गया।

4. साहित्यिक देन

जैन धर्म के द्वारा लोक भाषा में साहित्य की रचना की गई। लोक भाषा को समृद्ध बनाने में जैन धर्म का महत्वपूर्ण योगदान है। जैन धर्म के मूल धार्मिक ग्रंथों में 12 अंग 11 उपांग 10 पैन्न 5 मूलसूत 1 नंदीसूत और 7 छयसूत भी प्राकृत भाषा में है। कुछ धार्मिक ग्रंथों की रचना अपभ्रंश भाषा में हुई है। दक्षिण भारत के साहित्य में भी जैन धर्म का अत्यधिक प्रभाव है। दक्षिण भारत में जैन धर्म के प्रचार हेतु कन्नड़, तमिल, तेलुगु और अन्य भाषाओं में भी जैन ग्रंथों की रचना की गई। जैन धर्म के विद्वानों ने ना केवल धार्मिक व दर्शनिक रचनाओं का सृजन किया बल्कि उन्होंने व्याकरण काव्य और गणित आदि पर भी अनेक ग्रंथों की रचना की। गुप्त काल में संस्कृत भाषा के अधिक लोकप्रिय होने के कारण जैन विद्वानों ने अपने धर्म ग्रंथों की संस्कृत में भी रचना की। 11वीं शताब्दी में हेमचंद्र सूरी नामक जैन विद्वान में संस्कृत में ही अनेक महत्वपूर्ण ग्रंथ का सृजन किया। सभी जैन साहित्यकारों में हरीभद्र सिद्ध सेन आदि के नाम बहुचर्चित है। इनमें से सबसे ऊंचा स्थान हेमचंद्र सूरी का ही है।

5. कला के क्षेत्र में देन

जेल साहित्यकारों ने अपनी रचनाओं के द्वारा भारतीय साहित्य को समृद्ध बनाया। जैन कलाकारों ने अपनी कलाकृतियों के द्वारा भारतीय कला के क्षेत्र में बहुत वृद्धि की। जैन धर्म के अनुयायियों ने अपने धर्म के प्रचार एवं प्रसार के लिए पूज्य तीर्थ कारों की स्मृति को स्थाई बनाए रखने के उद्देश्य से मंदिरों, स्तूपों, मठों, रेलिंगों, प्रवेशद्वार, स्तंभों, गुफा व मूर्तियों का निर्माण कराया। दूसरी सदी में जैन धर्म के प्रचार के लिए हाथीगुम्फा नामक गुफाओं में अनेक कलाकृतियों का निर्माण किया गया। इसके अलावा राजगृह, पावापुरी, पार्श्वनाथ, पर्वत, सौराष्ट्र राजस्थान और मध्य भारत में अनेक जैन मंदिरों व मूर्तियों का निर्माण कराया। राजस्थान में आबू पर्वत पर तथा बुंदेलखंड खजुराहो ने 11वीं शताब्दी में निर्मित मंदिर वस्तु कला एवं मूर्तिकला के अद्भुत नमूने हैं। दक्षिण भारत में श्रवणबेलगोला के निकट 70 फुट ऊंची गोमतेश्वर मंदिर व बड़वानी में 84 फुट ऊंची जैन तीर्थंकर की प्रतिमा दर्शनीय है। इन प्रतिमाओं का निर्माण विशाल चट्टानों को काटकर किया गया है। इसके अलावा जैन धर्मावलंबियों के द्वारा धर्म स्तंभों का भी निर्माण कराया गया। जिसका उदाहरण चित्तौड़ के दुर्ग में निर्मित स्तंभ है जिसका जैन कला के 11वीं व 12वीं सदी में अत्यधिक विकास हुआ था।

6. अहिंसा

जैन धर्म अहिंसा का सिद्धांत नहीं था किंतु उल्लेखनीय तथ्य यह है कि अहिंसा का प्रचार जितना जैन धर्म के द्वारा किया गया उतना किसी अन्य धर्म के द्वारा नहीं हुआ। जैन धर्म ने अहिंसा पर अत्यधिक बल दिया और महावीर ने पशु पक्षी तथा वनस्पति की हत्या ना करने का अनुरोध अपने अनुयायियों से किया। क्योंकि उनका कहना था कि वनस्पतियों में भी जीव होता है। जैन धर्म में अहिंसा के सिद्धांत व अनेक प्रकार के कारण वैदिक धर्म के अंतर्गत होने वाले यज्ञ में भी बलि प्रथा धीरे–धीरे कम होने लगी। जैन धर्म में अहिंसा के प्रचार में अपना सम्पूर्ण सहयोग दिया।

7. राजनीतिक प्रभाव

जैन धर्म के अहिंसा के सिद्धांत के प्रचार में तत्कालीन राजनीतिक स्थिति में भी प्रभाव पड़ा। जैन धर्म के अनुयायियों द्वारा शांति प्रिय नीति का पालन करने का प्रयास किया जाना इस तथ्य को प्रमाणित करता है कि जैन साहित्य से तत्कालीन राजनीतिक स्थिति के विषय में अमूल्य जानकारी उपलब्ध होती है।

निष्कर्ष

विश्व के धर्म, दर्शन, संस्कृति, देश, समाज अथवा जाति के प्राचीन से प्राचीनतम अतीत के परोक्ष स्वरूप को प्रत्यक्ष की भाँति देखने का दर्पण तुल्य एकमात्र वैज्ञानिक साधन इतिहास है। किसी भी देश, समाज, जाति, धर्म, दर्शन तथा संस्कृति के अभ्युदय, पतन, पुनरुत्थान, आध्यात्मिक उत्कर्ष एवं अपकर्ष में निमित्त बनने वाले लोक नायकों के जीवनवृत्त आदि के क्रमबद्ध संकलन, आलेखन का नाम ही इतिहास है। इतिहास मानवता के लिए, भावी पीढ़ियों के लिए दिव्य प्रकाश स्तम्भ के समान दिशाबोधक मार्गदर्शक माना गया है, अतः किसी भी धर्म, समाज, संस्कृति अथवा जाति की सर्वतोमुखी उन्नति के लिए प्रेरणा के प्रमुख स्रोत उसके सर्वांगीण शृंखलाबद्ध इतिहास का होना अनिवार्य रूप से परमावश्यक है।

संदर्भ:

1. गैरोला, वाचस्पति : भारतीय चित्रकला, लोक भारतीय प्रकाशक, इलाहाबाद, 1963
2. गोपीनाथ कविराज : अभिनंदन गंथ, प्रकाशक अखिल भारतीय संस्कृत परिषद् लखनऊ, 1969
3. गोयल प्रीतिप्रभा : हिन्दू विवाह मीमांसा,रुपायन संस्थान,बोरुन्दा,1976
4. घोष, अमलानंद : आर्ट ऐण्ड आकि र्टेक्चर (अनु. लक्ष्मी चन्द्र जैन) जैन कला और स्थापत्य, नई दिल्ली, 197
5. चतुर्वेदी, गिरिधर शर्मा : पुराण परिशीलन,बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्, पटना, 1970
6. चौधरी, ग ुलाबचन्द्र : जैन साहित्य का ब्रहद इतिहास, भाग 6,पार्श्वनाथ विद्याश्रम शोध संस्थान, वाराणसी, 1973
7. चौधरी राममूर्तिः हरिवंश पुराण : एक सास्कृतिक अध्ययन, सुलभ प्रकाशन, लखनउ, 1989
8. जैन कमल प्रभाः प्राचीन जैन साहित्य में आर्थिक जीवन, पार्श्वनाथ शोधपीठ, वाराणसी, 1986
9. जैन कोमलचन्द्र : जैन और बौद्ध आगमों में नारी जीवन, काशी हिन्दु वि.विवाराणसी 1967
10. जैन गोकुलचन्द्र : यशस्तिलक का सांस्कृतिक अध्ययन, सोहनलाल जैन धर्म प्रचारक समिति अमृतसर, 1967